**ओ३म्**

**महर्षि दयानन्द के बलिदान दिवस दीपावली पर**

**‘महर्षि दयानन्द के वेद प्रचार और सर्वांगीण धार्मिक व सामाजिक**

**उन्नति के कार्यों से समस्त विश्व उनका ऋणी हैं’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य को यदि अपना परिचय जानना हो तो वह वेद वा वैदिक साहित्य में ही मिलता है। परिचय से हमारा तात्पर्य मनुष्य वस्तुतः क्या है, इसका सत्य ज्ञान का होना ही मनुष्य का परिचय है। महर्षि दयानन्द जी ने मनुष्य की परिभाषा करते हुए बताया है कि जो मननशील हो और स्व-आत्मवत अर्थात् जैसे मुझे सुख प्रिय व दुःख अप्रिय है इसी प्रकार से अपने हानि व लाभ की तरह दूसरों के सुख दुःख व हानि लाभ को समझता हो। यदि इतना ही जान लिया जाये और इसी पर आचरण किया जाये मनुष्य एक श्रेष्ठ मनुष्य बन सकता है। सभी मनुष्यों में कमी यह देखी जाती है कि वह अपने सुख व दुःख को ही अपना मानते हैं दूसरों के सुख व दुःख की परवाह नहीं करते और इस कारण हम कई बार दूसरों के सुखों की हानि व दुःखों की वृद्धि कर बैठते हैं। अतः हमें मननशील होना चाहिये और इसके लिए आवश्यक है कि हम सद्ग्रन्थों का नियमित स्वाध्याय व अध्ययन करें। इससे हमें सत्य और असत्य का ज्ञान होगा जिससे सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में हमें सहायता मिलेगी। जिस प्रकार से ज्ञानहीन मनुष्य पशु के समान होता है इसी प्रकार वेदादि सद्ग्रन्थों के अध्ययन से शून्य मनुष्य भी पशु के समान ही होता है।

 आज से लगभग 140 वर्ष पूर्व न केवल भारत देश अपितु सारा विश्व ही अज्ञान व अन्धविश्वासों से भरा हुआ था। शायद ही तब किसी को अपवाद स्वरुप पता रहा हो कि ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति का स्वरूप क्या है? मनुष्य के ईश्वर, अपने प्रति और संसार व समाज के प्रति कर्तव्य क्या हैं? यदि मनुष्यों को यह पता होते तो संसार में अन्याय, शोषण, पक्षपात, अभाव, रोग व शोक आदि न होते हैं। अज्ञान के कारण ही मनुष्य अपने कर्तव्यों के प्रति अनभिज्ञ व लापरवाह होता है, मिथ्या पूजा व उपासना प्रचलित होती है, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, गुरूडम, असत्य व मिथ्या ग्रन्थों का अध्ययन व उनकी मिथ्या शिक्षाओं का आचरण होता है। समाज में समरसता का स्थान विषमता लेती है और अज्ञान व अन्धविश्वासों के कारण ही लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति व दूसरों के स्वार्थों की हानि कर उनका शोषण व उन पर अन्याय करते हैं। इन बुराईयों को दूर करने के लिए ज्ञान की सर्वाधिक आवश्यकता है। ज्ञान के द्वारा ही अपने कर्तव्य व पदार्थों के सत्यस्वरुप को समझा जा सकता है व दूसरों को भी समझाया जा सकता है। इस पर भी यदि कोई सत्य का आचरण न करें तो दण्ड के द्वारा उसका सुधार कर उसे सत्य मार्ग पर लाना होता है। आज भी सभी देशों में न्यूनाधिक यही परम्परा व व्यवस्था चल रही है। कहीं यह अधिक प्रभावशाली व कारगर है और कहीं यह कमजोर व प्रभावहीन है। इसको प्रभावशाली बनाने के लिए इसकी व्यवस्था करने वाले राज्याधिकारियों व न्यायव्यवस्था से जुड़े हुए व्यक्तियों को पूर्ण सत्य का आग्रही व सत्याचरण के आदर्श को धारण करना होता है। जहां ऐसा होता है वहां व्यवस्था उत्तम होती है।

 महर्षि दयानन्द जी का जन्म आज से 190 वर्ष पूर्व सन् 12 फरवरी, सन् 1825 को गुजरात के मोरवी जिले के टंकारा नामक ग्राम में हुआ था। उनका किशोरावस्था का गुण उनका **‘मननशील’** होना था। यही कारण था कि जब पिता के कहने से उन्होंने शिवरात्रि का व्रतोपवास किया तो रात्रि में शिवलिंग पर चूहों को विचरण करता देखकर उनको शिवलिंग में एक सर्वशक्तिमान व दैवीय शक्ति के होने के विश्वास को ठेस लगी और उन्होंने निन्द्रासीन अपने पिता को उठाकर उनसे अनेक प्रश्न किये? पिता के पास उनके प्रश्नों का समाधान नहीं था, अतः उन्होंने उस व्रत को समाप्त कर दिया और सच्चे शिव को जानने का संकल्प लिया। कालान्तर में बहिन की मृत्यु होने पर उन्हें वैराग्य हो गया। अब मृत्यु से बचने और उस पर विजय पाने का एक और संकल्प उनके मन में उत्पन्न व धारण हो गया। जब तक माता पिता ने उन्हें अध्ययन करने की स्वतन्त्रता प्रदान की, वह घर पर रहे और अध्ययन करते रहे। जब उनके माता-पिता को उनके वैराग्य का ज्ञान हो गया और उन्होंने उनके विवाह का निश्चय कर दिया, तब उससे बचने के लिए और अपने संकल्पों को पूरा करने के लिए उन्होंने घर का त्याग कर दिया।

उन्होंने देश भर में घूम घूम कर ज्ञानी सत्पुरुषों, योगी, विद्वानों, महात्माओं और तपस्वियों की संगति की और उनसे जो भी ज्ञान प्राप्त हो सका या साधना का अभ्यास वह कर सकते थे, उसे उन्होंने जाना व प्राप्त किया। नर्मदा के तट व उसके उद्गम सहित वह उत्तराखण्ड के वन व पर्वतों के दुर्गम स्थानों में घूम घूम कर वह वहां विद्वानों और तपस्वी योगियों की तलाश करते रहे। ऐसा करके वह योग व ज्ञान में अन्यों की अपेक्षा से कहीं अधिक ज्ञानी हो गये। जितना ज्ञान वह प्राप्त कर सके थे, उससे उनका सन्तोष व सन्तुष्टि नहीं हुई। अभी भी उन्हें एक ऐसे गुरू की तलाश थी जो उनकी सभी शंकाओं व संशयों को दूर कर सके। उनकी यह तलाश भी मथुरा में प्रज्ञाचक्षु गुरू विरजानन्द सरस्वती को पाकर पूरी हुई जिनके सान्निध्य में लगभग 3 वर्ष रहकर उन्होंने अष्टाध्यायी-महाभाष्य-निरुक्त पद्धति से आर्ष व्याकरण, वेद व वेदादि साहित्य का अध्ययन किया। गुरु विरजानन्द ने उनकी सभी शंकाओं व संशयों की पूर्ण निवृत्ति कर दी। योग विद्या में वह पहले से ही योग गुरू शिवानन्द पुरी व ज्वालानन्द गिरी की शिक्षाओं व अभ्यास से निपुण हो चुके थे। गुरू विरजानन्द जी से विद्याध्ययन पूरा कर सन् 1863 में उन्होंने उनकी प्रेरणा से धार्मिक व सामाजिक जगत में वेदों वा सत्य के प्रचार को अपने जीवन का मुख्य उद्देश्य बनाया। सन् 1863 से आरम्भ कर अक्तूबर, 1883 तक उन्होंने वेद एव वैदिक मान्यताओं का प्रचार किया। इसके लिए उन्होंने असत्य, अज्ञान व अन्धविश्वासों का खण्डन किया और सभी धार्मिक व सामाजिक प्रश्नों के वेदों के आधार पर सत्य समाधान प्रस्तुत किये। उनके प्रसिद्ध कार्यों में सन् 1869 में काशी में लगभग 30 विख्यात शीर्षस्थ पण्डितों से मूर्तिपूजा के वेदानुकूल होने पर शास्त्रार्थ था जिसमें प्रतिपक्षियों द्वारा मूर्तिपूजा वेदों के अनुकूल सिद्ध न की जा सकी। स्वामी जी ने वेदों के आधार पर मूर्तिपूजा सहित मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, बाल विवाह, सामाजिक विषमता वा जन्मना जाति-वर्ण व्यवस्था आदि का पुरजोर खण्डन किया। स्त्री व शूद्रों के लिए निषिद्ध वेदों के अध्ययन का उन्होंने उन्हें अधिकार दिया।

मुम्बई में 10 अप्रैल, 1875 को वेदों के प्रचार व असत्य के शमन के लिए स्वामी जी ने आर्यसमाज तथा सन् 1883 को अजमेर में परोपकारिणी सभा की स्थापना की। संस्कृत की पाठशालायें खोलकर उन्होंने वेदों के अध्ययन को प्रवृत्त किया। हिन्दी रक्षा व हिन्दी को सरकारी काम काज की भाषा बनाने के लिए हस्ताक्षर अभियान का श्री गणेश किया जिसे अंग्रेज सरकार द्वारा नियुक्त हण्टर कमीशन को प्रस्तुत किया गया। सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका, वेदभाष्य एवं अन्य सभी ग्रन्थ हिन्दी में लिखकर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तंत किया। धर्म ग्रन्थ के रूप में सत्यार्थ प्रकाश तथा ईश्वरीय ज्ञान वेदों के भाष्य को हिन्दी में सर्वप्रथम प्रस्तुंत करने का श्रेय उन्हीं को है। गोरक्षा व गोवध रोकने की दिशा में भी उन्होंने **‘गोकरूणानिधि’** पुस्तक लिखकर व अनेक राज्याधिकारियों से मिलकर इस दिशा में प्रशंसनीय कार्य किया। गोहत्या व गोमांस सेवन को उन्होंने महापाप की संज्ञा दी और गोरक्षा को राष्ट्र की आर्थिक उन्नति का आधार सिद्ध किया। सत्यार्थ प्रकाश, आर्याभिविनय तथा वेदभाष्य में स्वराज्य व सुराज्य की चर्चा कर तथा धार्मिक व सामाजिक जागृति उत्पन्न कर देश की आजादी के आन्दोलन के लिए भूमि तैयार की। रामायण, महाभारतकालीन और उसके बाद के पूवजों के उत्कृष्ट देशहित के कार्य करने के लिए उनको सम्मान व गौरव दिया। खण्डन-मण्डन, सभी मतों के ग्रन्थों का अध्ययन और समीक्षा, शास्त्रार्थ, वार्तालाप, उपदेश व प्रवचन द्वारा भी वैदिक सत्य मान्यताओं के प्रचार का ऐतिहासिक कार्य उन्होंने किया। उनके आविर्भाव से पूर्व हिन्दुओं का अन्य मतों में लोभ, बलप्रयोग, छल व कपट आदि से धर्मान्तरण होता था। महर्षि दयानन्द ने वेदों के आधार पर हिन्दू धर्म को सत्य व ज्ञान पर प्रतिष्ठित किया तथा अन्य मतों की समीक्षा कर उनमें विद्यमान अज्ञान व अन्धविश्वासों की ओर ध्यान दिलाया जिससे एकपक्षीय धर्मान्तरण समाप्त हुआ और अन्य मत के लोग भी सहर्ष आर्य धर्म को स्वीकार करने लगे। भारतीय समाज से अज्ञान, अन्धविश्वास, सामाजिक विषमतायें दूर हुई जिससे मनुष्य परस्पर संगठित होकर वैदिक धर्म के अनुसार ईश्वरोपासना, यज्ञ हवन आदि करने लगे व माता-पिता-आचार्य आदि का सम्मान करने की प्रेरणा सबको प्राप्त हुई। मांसाहार के दुगुर्णों व हानियों से भी लोग परिचित हुए तथा बड़ी संख्या में लोगों ने इसे त्याग दिया। उनके प्रचार व प्रयत्नों से शाकाहार में वृद्धि हुई। गोदुग्ध व गोघृत की महिमा में भी वृद्धि हुई। भारतीयता व प्राचीन भारत का गौरव महर्षि दयानन्द के कार्यों से न केवल देश में ही अपितु विदेशों में भी बढ़ा। ऐसे अनेकानेक कार्य महर्षि दयानन्द जी ने किये जिससे देश को अपूर्व लाभ हुआ और उन्नति हुई।

 महर्षि के प्रचार से सभी मतों के लोग उनके विरोधी व शत्रु बन गये थे। एक षडयन्त्र के अन्तर्गत जोधपुर में उनको विष देकर उनका जीवन समाप्त कर दिया गया। दीपावली के दिन अजमेर में सूर्यास्त के समय उन्होंने अपने प्राणों को ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना एवं उपासना करते हुए स्वेच्छा से त्याग दिया। महर्षि दयानन्द ने वेदों के ज्ञान को प्राप्त कर पुनः संसार को उपलब्ध कराया व ईश्वर तथा जीवात्मा आदि के सत्य स्वरूप से परिचय व ईश्वर उपासना की सच्ची पद्धति हमें बताई। दीपावली पर उनके बलिदान पर्व पर हम उनको अपनी हृदय के प्रेम से सिक्त श्रद्धाजंलि प्रस्तुत करते हैं। उनके अपूर्व कार्यों से मानवता लाभान्वित हुई है, अतः सारा संसार उनका ऋ़णी है। उनका यश व कीर्ति चिरस्थाई रहेगी।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**